9.1 प्रस्तावना Cold War: Origin, Evolution, etc.

जब 1945 में, मित्र राष्ट्रों की विजय के साथ, द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हुआ, तब यह अपेक्षा की गई थी कि युद्ध की विभीषिका का, शांति और सहयोग के नए वातावरण में, सदा के लिए अंत हो जाएगा। दुर्भाग्यवश, ऐसा नहीं हुआ। इटली 1944 में पराजित हो गया था; उसके पश्चात् जर्मनी के विरुद्ध दूसरा मोर्चा खोला गया। हिटलर ने अपनी पराजय निश्चित देखकर अप्रेल 1945 के अंत में आत्महत्या कर ली, और उसके एक सप्ताह पश्चात् जर्मनी ने मित्र राष्ट्रों के समक्ष बिना शर्त आत्मसमर्पण कर दिया। तब चार प्रमुख विजयी मित्र राष्ट्रों ने अस्थायी तौर पर जर्मनी को चार भागों में विभाजित करके उन पर सैनिक कब्ज़ा कर लिया। जर्मनी के साथ शांति संधि संभव न होने की स्थिति में, अगस्त 1945 में, तब तक अपराजित, जापान पर अमेरिका ने दो अणु बम गिरा कर, अपमानित जापान को आत्मसमर्पण करने के लिए विवश कर दिया। उसके साथ ही द्वितीय विश्व युद्ध का अंत हो गया। परन्तु, युद्ध की समाप्ति ने सहयोग और मैत्री के युग का श्रीगणेश **नहीं** किया। तब तक रहे मित्रों को अचानक एक दूसरे का शत्रु बना दिया। परन्तु दो मुख्य विजेताओं, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ के मध्य शत्रुता का रूप विचित्र था। अब इन दोनों महाशक्तियों ने यह नया युद्ध अपनी सशस्त्र सेनाओं के द्वारा नहीं लड़ा। उन्होंने इसे राजनयिक युद्ध का रूप दिया। उनके बीच गंभीर तनाव पैदा हो गया, और उन्होंने एक दूसरे को नीचा दिखाने के प्रयास आरंभ कर दिए। इसे शीत युद्ध की संज्ञा दी गई।

Scanned with CamScanner

तनाव की यह विचित्र स्थिति चार दशकों से अधिक चली। दोनों महाशक्तियों के नेतृत्व में गठित शक्ति गुटों के मध्य तीसरे (परमाणु) युद्ध जैसी स्थिति तो उत्पन्न हुई, परन्तु उसे सुलझा लिया गया। सशस्त्र युद्ध नहीं हुआ। ऐसे समय भी आए जब उनके सम्बंधों में इतना सुधार हुआ कि लगा कि सामान्य स्थिति उत्पन्न होने वाली थी। इस चरण को तनाव शैथिल्य का नाम दिया गया।

जिस प्रकार कई बार सहयोग का स्थान संघर्ष ले लेता है, उसी प्रकार उसके विपरीत स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है। शीत युद्ध 1980 के दशक के अंत तक चला, परन्तु अंततः इसका स्थान सोवियत-अमरीकी सहयोग ने ले लिया। दोनों पक्षों के नेताओं के शांति प्रयास तब सफल हुए जब 1989 के अंतिम दिन अमरीकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश तथा सोवियत राष्ट्रपति गौर्बाचोव ने औपचारिक रूप से शीत युद्ध के अंत की घोषणा कर दी।

इस इकाई में आप अति संक्षेप में शीत युद्ध के अर्थ और उसकी उत्पत्ति के विषय में पढ़ेंगे, क्योंकि किसी स्थिति का अंत समझने के लिए उसके आरंभ की भी थोड़ी जानकारी आवश्यक होती है। आपको तनाव शैथिल्य से भी परिचित करवाया जाएगा। उसके पश्चात्, संक्षेप में हम उस घटनाक्रम का अध्ययन करेंगे जिसके अंत में शीत युद्ध समाप्त हो गया।

9.2 शीत युद्ध क्या था?

शीत युद्ध अस्त्रविहीन शांतकालीन संघर्ष था। यह ऐसा युद्ध था जिसमें विरोधी सेनाओं ने लड़ाई नहीं की, जिसमें बंदूकें नहीं चलीं, टैंक रणक्षेत्र में नहीं उतरे, तथा बम नहीं गिराए गए। द्वितीय विश्व युद्ध का आरंभ 1939 में तब हुआ था जब पोलैण्ड पर जर्मनी ने आक्रमण किया, और ब्रिटेन एवं फ्रांस सहित अनेक देशों ने 3 सितम्बर 1939 के दिन जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। आगे चलकर इटली और जापान जर्मनी के साथ हो गए, तथा सोवियत संघ (जून 1941) और अमेरिका (दिसम्बर 1941) में मित्र राष्ट्रों की ओर शामिल हुए। शत्रु को पराजित कर विजयी मित्र राष्ट्रों में सबसे अधिक शक्तिशाली होकर संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ उभरे थे। परमाणु बम प्राप्त करके अमेरिका (1945 में) और सोवियत संघ (1949 में) महाशक्तियाँ बन गए। अन्य विजयी राष्ट्र अपनी आर्थिक एवं सामरिक शक्ति से हाथ धो बैठे थे। अतः उपनिवेशवाद उन्मूलन की प्रक्रिया आरंभ हो गई, परन्तु पूर्वी यूरोप के अनेक देश साम्यवादी प्रभाव में आकर सोवियत गुट में शामिल हो गए। उनके समूह को पूर्वी गुट, सोवियत गुट या साम्यवादी गुट कहा गया। अनेक पश्चिमी पूँजीवादी देशों ने अमेरिका का नेतृत्त्व स्वीकार कर लिया, और उनका समूह पश्चिमी गुट, या अमरीकी गुट, या पूँजीवादी गुट, या लोकतांत्रिक गुट के नाम से जाना गया। नई उभरी अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था में अनेक यूरोपीय तथा ग़ैर-यूरोपीय देशों के मध्य शक्ति का विभाजन हुआ। इसके अतिरिक्त, कैग्ले (जूनियर) एवं विट्कॉफ के अनुसार, "परमाणु अस्त्रों के उदय ने विश्व राजनीति में युद्ध की धमकी की भूमिका में आमूल परिवर्तन कर दिया। इन परिस्थितियों में वर्चस्वशील नेतृत्त्व के लिए संयुक्त राज्य तथा सोवियत संघ के मध्य प्रतिद्वंदिता आरंभ हो गई।"

9.2.1 शीत युद्ध का अर्थ और उसकी प्रकृति

शीत युद्ध शब्द का प्रयोग अमरीकी गुट और सोवियत गुट के मध्य शत्रुतापूर्ण आचरण के लिए किया गया। जब वाल्टर लिपमैन (Walter Lippmann) ने शीत युद्ध शब्द का प्रयोग किया तब उसका अभिप्राय दो शक्ति गुटों के मध्य ऐसी युद्ध-जेसी स्थिति से था, जो कि युद्ध की स्थिति वास्तव में नहीं थी। इससे पूर्व ऐल्फ्रेड सॉवी ने सर्वप्रथम शीत युद्ध शब्द का प्रयोग किया था। यह एक 'कूटनीतिक युद्ध' था; दो या दो से अधिक शक्तियों के मध्य सशस्त्र संघर्ष नहीं था। फ्लेमिंग (Flemming) ने शीत युद्ध का वर्णन करते हुए इसे एक ऐसा युद्ध बताया जो "युद्ध-स्थल में नहीं लड़ा जाता, परन्तु मानवों के मस्तिष्क में होता है; एक (व्यक्ति) अन्य के मस्तिष्कों को नियंत्रित करने का प्रयास करता है।" जॉन फौस्टर डलेस (John Foster Dulles) जो कि पचास के दशक में कई वर्ष तक अमेरिका का विदेश मंत्री रहा था तथा एक प्रमुख सोवियत-विरोधी राजमर्मज्ञ था, के अनुसारः "शीत युद्ध नैतिक मूल्यों के लिए नैतिक धर्मयुद्ध (moral crusade) था - बुराई के विरुद्ध अच्छाई का, गलत के विरुद्ध सही का तथा नास्तिकता के विरुद्ध धर्म का।" डलेस के विचार में सोवियत संघ बुराई, गलती तथा नास्तिकता

Scanned with CamScanner

का प्रतीक था। उसने शीत युद्ध को नैतिक परिमाण प्रदान वि ा और सोवियत संघ को बुरा, ग़लत और नास्तिक बताया। लुई हॉल (Louis Halle) ने अपनी पुस्तक *The (old War as History* में लिखा था कि शीत युद्ध दो गुटों के बीच तीव्र तनाव की स्थिति थी, यह सशस्त्र यु॰ से भी अधिक भंयकर था; शीत युद्ध के विभिन्न पक्ष समस्याओं को उलझाने का प्रयास करते थे, बजाय इसके कि उन्हें सुलझाने की चेष्टा करें। सभी विवादों तथा संघर्षों को शीत युद्ध के मोहरों के रूप में प्रयोग किया जाता था। लुई हॉल द्वारा शीत युद्ध की प्रस्तुत समीक्षा से यह स्पष्ट था कि कल तक के मित्रों (erstwhile friends) के मध्य कोई विश्वास शेष नहीं रह गया था। सामान्य युद्ध आमने-सामने खुले में खेला जाता है। प्रत्येक को पता होता है कि कौन किसका शत्रु है। शत्रु देशों के मध्य राजनयिक संबंध समाप्त कर दिए जाते हैं। शीत युद्ध में ऐसा कुछ नहीं हुआ। वैधानिक तथा औपचारिक रूप से शीत युद्ध से संबद्ध विभिन्न देश मित्र बने रहे तथा उनके राजनयिक संबंध सामान्य बने रहे। हाँ, व्यवहार में राजनयिकों का प्रयोग विभिन्न देशों की सरकारों और उनके लोगों के मध्य अविश्वास की भावना का प्रसार करने के लिए किया गया। ग्रीव्स के अनुसार - "परमाणु युग में, शीत युद्ध, संघर्ष का एक ऐसा रूप है जो कि ग्रीष्म युद्ध के स्तर से नीचे लड़ा जाता है।" नेहरू ने इसे स्नायु युद्ध कहा था।

शीत युद्ध की प्रकृति में, इसके चार दशकों के अस्तित्व में, अनेक परिवर्तन हुए। कैग्ले और विट्कॉफ ने शीत युद्ध की तीन प्राथमिक विशेषताओं का उल्लेख किया है। वे थीं:

— कभी गंभीर संघर्ष और कभी सापेक्षिक सहयोग की स्थितियों में परिवर्तन होता रहता था; तथा परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया भी दिखाई देती रहती थी।

— दोनों प्रमुख शक्तियाँ (संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ) अपनी घोषित विचारधाराओं को छोड़ने के लिए तैयार हो जाती थीं, यदि उनके राष्ट्रीय हितों में विचारधारा को त्यागना आवश्यक हो जाए। उदाहरण के लिए, समय-समय पर जब भी शक्ति की राजनीति ने मज़बूर किया, तब दोनों ही महाशक्तियों ने ऐसे मित्र देशों का समर्थन करने में भी कोई देर नहीं लगाई जिनकी राजनीतिक व्यवस्थाएँ उनसे बिल्कुल विपरीत भले ही रही हों।

— शीत युद्ध की सम्पूर्ण अवधि में दोनों ही प्रतिद्वंद्वियों (प्रतिस्पद्धियों) ने इस बात का निरंतर प्रयास किया कि उनमें कोई प्रत्यक्ष युद्ध न हो। धीरे-धीरे दोनों ही देशों ने विचार विमर्श और सौदेबाजी के द्वारा, संयम और इनाम के द्वारा एक ऐसी सुरक्षा व्यवस्था की रचना की जिसके माध्यम से उनके विवादों का शांतिपूर्ण प्रबंधन किया जा सका।

अतः, हम कह सकते हैं कि यह "शांतिकालीन शस्त्रास्त्रविहीन युद्ध" था। मूल रूप से यह वैचारिक घृणा तथा राजनीतिक अविश्वास पर आधारित था। शीत युद्ध के दोनों पक्ष 'मैत्रीपूर्ण-शत्रु' अथवा 'शत्रुतापूर्ण-मित्र' थे। वे निरंतर राजनयिक तथा राजनीतिक उपायों से एक-दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयास करते रहते थे। उनके मध्य निरंतर सैनिक प्रतिद्वंद्विता तथा गुप्तचरी की प्रक्रिया चलती रहती थी। संक्षेप में, शीत युद्ध एक ऐसा मनोवैज्ञानिक युद्ध था जिसमें प्रतिपक्ष के प्रभाव क्षेत्र को कम करने, तथा अपने समर्थकों की संख्या में वृद्धि का प्रयास किया जाता था। शीत युद्ध के समय संसार में दो स्पष्ट प्रतिद्वंद्वी गुट थे। ये दोनों ऐसे सशस्त्र गुट थे जो अपने सैनिकों, तोपों, टैंकों, विमानों तथा युद्धपोतों का प्रयोग नहीं करते थे। अतः, जैसा कि लुई हॉल ने लिखा था, शीत युद्ध सामान्य सशस्त्र संघर्ष से भी ख़राब था।

शीत युद्ध के दोनों ही पक्ष एक-दूसरे के विरुद्ध वैचारिक अस्त्रों का प्रयोग कर रहे थे। दोनों महाशक्तियों की चेष्टा थी कि दूसरे गुट की शक्ति को कम किया जाए, दूसरे गुट से कुछ देशों को अलग (defect) करवाया जाए, तथा अपनी स्थिति को सुदृढ़ किया जाए। दोनों महाशक्तियाँ अपने गुट के सदस्य देशों को उदारता से आर्थिक सहायता दे रही थीं, तथा उन्होंने कई देशों में अपने सैनिक अड्डे भी स्थापित कर लिए थे। दोनों शक्ति-गुट अपने हितों की अभिवृद्धि के लिए प्रचार, गुप्तचरी, सैनिक हस्तक्षेप, सैनिक संधियों, क्षेत्रीय संगठनों तथा शस्त्रास्त्रों की आपूर्ति जैसे उपायों का सहारा ले रहे थे। दोनों पक्षों के द्वारा इस प्रकार के कार्यों से शीत युद्ध की गंभीरता बढ़ रही थी। दोनों महाशक्तियाँ तथा उनके निकट सहयोगी देश प्रत्येक समस्या को अपने वैचारिक तथा गुट के दृष्टिकोण से देखते थे। इस बात के प्रयास किए गए कि दूसरे गुट के देशों में औद्योगिक असंतोष व्याप्त हो,

Scanned with CamScanner

जातीय संघर्ष तथा सांप्रदायिकता एवं संकीर्ण राष्ट्रीय भावनाओं को उभारकर उसे कमजोर किया जाए। अत; जैसा कि लुई हॉल ने कहा शीत युद्ध तो सामान्य सशस्त्र युद्ध से भी बुरा था।

जिस प्रकार की विश्व व्यवस्था द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् जन्मी थी, वह अंतर - युद्धकाल से बहुत भिन्न थी। सबसे महत्वपूर्ण घटना थी, संयुक्त राज्य अमेरिका की शक्तिशाली राजनीतिक भूमिका का विकास। आर्थिक तौर पर तो अमेरिका एक महाशक्ति था ही। जो नया विकास हुआ, वह था - अमेरिका की विश्वव्यापी राजनीतिक तथा सैनिक भूमिका। शीघ्र ही सोवियत संघ उसके प्रतिद्वंद्वी के रूप में उभरा। अतः, अमेरिका तथा सोवियत संघ के मध्य जो तनाव धीरे-धीरे बढ़ता गया और जिसने मानवता को तृतीय विश्व युद्ध के कगार पर पहुँचा दिया, उसको ही शीत युद्ध की संज्ञा दी गई।

9.2.2 शीत युद्ध की उत्पत्ति तथा विकास

शीत युद्ध के अंत से संबंधित इस इकाई में शीत युद्ध की उत्पत्ति और विकास का विस्तृत अध्ययन न तो आवश्यक है, और न संभव। अतः हम संक्षेप में कुछ प्रमुख घटनाओं पर प्रकाश डालेंगे।

यह तो निश्चित रूप से कोई नहीं कह सकता कि शीत युद्ध का आरंभ कब हुआ। सोवियत संघ ने अमेरिका पर इसकी उत्पत्ति के लिए दोष देते हुए कहा कि उसने जर्मनी के विरुद्ध दूसरा मोर्चा खोलने में देरी की - मध्य 1944 तक सोवियत संघ को अकेले ही जर्मनी से युद्ध करना पड़ा। पश्चिमी देशों पर इस बात के लिए भी संदेह व्यक्त किया गया कि वे यह चाहते थे कि नात्सी-फ़ासी तानाशाह और सोवियत संघ दोनों एक दूसरे से लड़ते हुए बर्बाद हो जाएँ, ताकि विजय का समूचा फल शेष मित्र राष्ट्रों (पूँजीवादी देशों) को मिले। सोवियत संघ इस पर भी क्रोधित था कि अमेरिका ने उसे विश्वास में लिए बिना अणु बम का आविष्कार किया तथा जापान पर उसने बम गिराए, ठीक उसी समय जब सोवियत संघ जापान के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करने वाला ही था। युद्ध के पश्चात् अमेरिका ने ट्रुमन सिद्धान्त और और मार्शल योजना के द्वारा सोवियत-विरोधी मोर्चा तैयार किया। ट्रुमन सिद्धान्त से पूर्व, मार्च 1946 में चर्चिल द्वारा फल्टन में दिए गए सोवियत-विरोधी भाषण ने उसके विरुद्ध संघर्ष की घोषणा कर दी थी। चर्चिल ने सोवियत संघ पर याल्टा समझौते की अवहेलना करने का आरोप लगाया, क्योंकि उसने जर्मनी से स्वतंत्र करवाए गए देशों में लोकतांत्रिक चुनाव नहीं करवाए और उसने पूर्व और पश्चिम के बीच लोहे का पर्दा (Iron curtain) लगा दिया। चर्चिल ने स्वतंत्रता, ईसाई सभ्यता और लोकतंत्र की रक्षा के लिए सोवियत गुट के विरुद्ध अभियान चलाने का आह्वान किया ताकि साम्यवाद के प्रसार को रोका (contain) जा सके।

दूसरी ओर, पश्चिमी देशों ने सोवियत संघ पर आरोप लगाया कि उसने इस आश्वासन को तोड़ा कि युद्ध के पश्चात्, सभी उन देशों में लोकतांत्रिक चुनाव करवाए जाएँगे जो नात्सी नियंत्रण से स्वतंत्र करवा लिए जाएँगे, तथा यह भी कि उन देशों को अपनी सरकारें चुनने की स्वाधीनता होगी। परन्तु, सोवियत संघ ने पूवी यूरोप के देशों में कठपुतली साम्यवादी सरकारें स्थापित कर दीं। सोवियत संघ ने ग्रीस और तुर्की में अपनी व्यवस्था स्थापित करने के प्रयाय किए। उसने इस वचन का पालन भी नहीं किया कि उसकी सेना, युद्ध के तुरंत बाद ईरान से हटा ली जाएगी। सोवियत संघ ने पाश्चात्य देशों के विरुद्ध घृणा का अभियान छेड़ दिया, तथा कॉमिनफॉर्म की स्थापना की।

यह संघर्ष मूल् रूप से विचारधारा पर आधारित था। मॉस्कों में अमरीकी दूतावास के एक वरिष्ठ राजनयिक जॉर्ज कैनन ने अपने देश के विदेश मंत्रालय को अपना प्रसिद्ध लम्बा तार (long telegram) भेजा। कैनन ने लिखा था कि "सारांश यह है कि यहाँ (सोवियत संघ) पर राजनीतिक सत्ता (सरकारी तंत्र) की हठधर्मी वचनबद्धता है कि हमारे (अमेरिका के) साथ उनके कोई स्थायी सम्बंध नहीं हो सकते हैं, यह वांछनीय और आवश्यक है कि हमारे (अमरीकी) समाज की आंतरिक शांति को भंग किया जाए, हमारी पारम्परिक जीवन शैली को नष्ट किया जाए, हमारे देश की अन्तर्राष्ट्रीय सत्ता (प्रतिष्ठा) को तोड़ा जाए" - उनके (सोवियत संघ के) विचार से सोवियत शक्ति को सुरक्षित रखने के लिए ऐसा करना आवश्यक था। बाद में कैनन के इस तार को अमेरिका में प्रकाशित किया गया। भेजने वाले के हस्ताक्षर के स्थान पर "X" अंकित था।

Scanned with CamScanner

संयुक्त राज्य अमेरिका की नीति साम्यवाद के प्रसार को रोकने के उद्देश्य से प्रेरित थी। उधर सोवियत संघ को आशा थी कि पूँजीवाद और साम्राज्यवाद का विनाश निश्चित था। शीत युद्ध का विकास संघर्ष के अनेक मार्गों से, तथा थोड़े से सहयोग के पथ से होकर गुज़रा। दोनों महाशक्तियों (सोवियत संघ तथा अमेरिका) ने, 1950 के दशक के आरंभ में, क्रमशः उत्तरी कोरिया एवं दक्षिणी कोरिया का समर्थन किया। कुछ समय तक (1950 में) सोवियत संघ ने, चीन को प्रतिनिधित्व दिलवाने के लिए, संयुक्त राष्ट्र का बहिष्कार किया। पश्चिमी देशों ने 1956 में हंगरी में सोवियत हस्तक्षेप की निंदा की। उससे पूर्व जर्मनी का दो भागों (अमेरिका - समर्थित पश्चिमी जर्मनी तथा सोवियत समर्थित पूर्वी जर्मनी) में विभाजन हो गया था। इसने संघर्ष को नई ऊँचाई पर पहुँचा दिया था। यह स्थिति तब (1948-49) और भी गंभीर हो गई थी जबकि सोवियत संघ ने पश्चिमी बर्लिन की घेराबंदी कर दी, तथा 11 महीने तक अमेरिका ने बर्लिन वासियों को विमानों से सब प्रकार का सहायता पहुँचाता रहा। बाद में (1961) बर्लिन को दो भागों में विभाजित रखने वाली एक दीवार का निर्माण कर दिया गया।

1959 में अमरीकी राष्ट्रपति आईज़नहॉवर तथा सोवियत नेता ख्रुश्चेव के मध्य हुई शिखर वार्ता ने यह आभास दिया था कि सहयोग का युग आरंभ होने वाला था, परन्तु मई 1960 में सोवियत वायु सेना ने अमेरिका के एक जासूसी विमान (U-2) को सोवियत वायु सीमा का उल्लंघन करते समय मार गिराया। इससे तनाव में अत्यधिक वृद्धि हो गई, जो कि अक्टूबर 1962 में उस समय अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया जब सोवियत संघ ने परमाणु प्रक्षेपास्त्रों तथा अधिकारियों से भरे जहाज़ क्यूबा की ओर रवाना कर दिए। अमरीकी नौ सेना ने क्यूबा की घेराबंदी करके, सोवियत जहाज़ों को वापस चले जाने के लिए विवश कर दिया। इस क्यूबा संकट के टलने के साथ तृतीय विश्व युद्ध (जो परमाणु युद्ध हो सकता था) की संभावना भी टल गई।

9.3 शीत युद्ध के अंत की ओर

विश्व की राजनीति में 1945 से 1962 के मध्य के काल को शीत युद्ध से संबद्ध किया जाता है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि इस अवधि में दोनों शक्ति गुटों के बीच तनाव के स्तर में सदा ही वृद्धि होती रही। इस बीच तनाव में कमी के भी अंतरिम समय आते रहे। उदाहरण के लिए 1953-56 की अवधि में पूर्व-पश्चिम संबंधों में सुधार हुआ। कैम्प डेविड के 1959 के शिखर सम्मेलन में तनाव शैथिल्य के संकेत मिले, परन्तु मई 1960 से अक्टूबर 1962 तक शीत युद्ध अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया। क्यूबा संकट के पश्चात् लगभग 12-13 वर्ष का ऐसा समय रहा जब तनाव में भारी कमी या शिथिलता का अनुभव हुआ।

सन् 1953 में स्टालिन की मृत्यु के पश्चात् दोनों शक्ति गुटों के सम्बंधों में उल्लेखनीय सुधार हुए। जुलाई 1953 में कोरिया युद्ध में औपचारिक युद्ध-विराम हो गया। अगले वर्ष, 1954 में जिनेवा सम्मेलन में हिंद-चीन के संबंध में शांति समझौता हुआ। ऑस्ट्रिया के प्रश्न का समाधान 1955 में हो गया। उसकी तटस्थता को मान्यता प्रदान की गई तथा सोवियत संघ ने ऑस्ट्रिया से अपनी सेना वापस बुला ली। सोवियत संघ ने फ़िनलैण्ड के पोरकाला (Porkkala) क्षेत्र से भी अपने सैनिक बुला लिए। पश्चिम जर्मनी और सोवियत संघ के सम्बंधों में भी सुधार के आसार दिखाई दिए। पश्चिम जर्मनी के चांसलर कोनार्ड आडेनॉयर (Konard Adenauer) को मास्को यात्रा के लिए आमंत्रित किया गया, तथा इस यात्रा के फलस्वरूप दोनों देशों के मध्य राजनयिक संबंध स्थापित हो गए। दस वर्ष के अंतराल के पश्चात् 1955 में चार प्रमुख शक्तियों का जिनवा शिखर सम्मेलन हुआ। इसमें अमेरिका के राष्ट्रपति आइज़नहावर, सोवियत नेता ख्रुश्चेव एवं प्रधानमंत्री बुल्गानिन, ब्रिटिश प्रधानमंत्री ऐन्थनी ईडन और फ्रांस के प्रधानमंत्री फॉर (Edger Faure) ने भाग लिया। इस सम्मेलन में कोई विशेष उपलब्धि नहीं हुई, परनतु इससे पूर्व-पश्चिम संबंधों में सुधार अवश्य प्रदर्शित हुआ। सोवियत सरकार ने पहली बार सिद्धान्त रूप में यह स्वीकार किया कि जर्मनी दो भागों में विभाजित था और उनकी अपनी-अपनी सरकारें थीं। वे दो देश थे - जर्मन संघीय गणराज्य (पश्चिमी जर्मनी) तथा जर्मन लोकतांत्रिक गणराज्य (पूर्वी जर्मनी)। 1956 अंतर्राष्टीय साम्यवाद के लिए महत्वपूर्ण था। स्टालिन के उत्तराधिकारी और विश्वासपात्र ख्रुश्चेव ने स्वयं स्टालिन की घोर निंदा की। इसको पश्चिमी गुट ने साम्यवाद का उदारीकरण माना।

Scanned with CamScanner

युद्ध सीमाओं का अनुमोदन करवाना था। द्वितीय, यह सुरक्षा संबंधी प्रश्नों पर भी चर्चा करवाना चाहता था। आरंभ में पश्चिमी गुट के देशों में, कोई विशेष उत्साह नहीं था। जैसे-जैसे बातचीत आगे बढ़ी, उन्होंने सोवियत संघ से अधिक से अधिक रियायतें प्राप्त करने की कोशिश की। पश्चिमी तथा गुट-निरपेक्ष देशों का तर्क था कि यूरोपीय देशों की सीमाओं को अंतिम नहीं माना जा सकता, परन्तु सम्मेलन में यह निर्णय हुआ कि इन देशों की सीमाओं में बल प्रयोग के द्वारा परिवर्तन नहीं किए जाएँगे। हेल्सिंकी समझौते पर सभी 35 देशों ने हस्ताक्षर किए, परन्तु इसमें की गई घोषणाएँ वैधानिक रूप से बाध्यकारी नहीं थीं, तथापि वे औपचारिक अवश्य थीं। अंतिम दस्तावेज़ (Final Act) में दस सिद्धान्तों का समावेश था। वे थेः (i) सभी राष्ट्रों की संप्रभु समानता, (ii) राष्ट्रीय संप्रभुता में निहित सभी के अधिकारों का सम्मान, (iii) न तो बल प्रयोग करना, और न उसकी धमकी देना, (iv) राज्यों की प्रादेशिक अखंडता और सीमाओं की अनुल्लंघनीयता, (v) अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का शांतिपूर्ण समाधान, (vi) एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना, (vii) अभिव्यक्ति, धर्म और विश्वास की स्वतंत्रता तथा मानव अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं का सम्मान, (viii) समानता और लोगों का आत्मनिर्णय का अधिकार, (ix) राज्यों के मध्य सहयोग, तथा (x) अन्तर्राष्ट्रीय कानून में निहित उत्तरदायित्वों का निर्वहन। हेल्सिंकी के (समझौते) अंतिम दस्तावेज़ में आर्थिक और सांस्कृतिक सहयोग के कुछ सिद्धान्तों का प्रावधान भी किया गया। सम्मेलन में भाग लेने वाले सभी देशों ने मूल मानव अधिकारों को बढ़ावा देने तथा विभिन्न देशों में पारस्परिक संपर्क को सरल बनाने की वचनबद्धता भी व्यक्त की। आलोचकों ने कहा कि जो वचन सोवियत संघ तथा उसके सहयोगी पूर्वी यूरोपीय देशों ने दिए थे, उनका पालन लगभग नहीं के बराबर ही किया गया।

9.3.5 नव शीत युद्ध

हेल्सिंकी सम्मेलन के समय पर तनाव शैथिल्य अपनी चरम सीमा पर था, परन्तु उसके पश्चात् इसकी गति धीमी पड़ गई। सोवियत संघ और अमेरिका के सम्बंध एक बार फिर इतने बिगड़ गए कि 1980 में ऐसा प्रतीत होने लगा कि शीत युद्ध वापस आ गया है। जो तनाव इस बार उभरकर आया उसको नव-शीत युद्ध की संज्ञा दी गई। दिसंबर 1979 में जब सोवियत सैनिकों ने भारी संख्या में अफ़ग़ानिस्तान में प्रवेश करके उसकी राजनीति

Scanned with CamScanner

में हस्तक्षेप किया, और उस पर कब्ज़ा कर लिया, तब शीत युद्ध पुनः सामने आ गया। दोनों शक्ति गुटों में तनाव शैथिल्य के मार्ग से हटने की प्रक्रिया एक समान नहीं थी। सोवियत संघ ने कुछ क्षेत्रों में सहयोग और कुछ में संघर्ष का मार्ग अपनाया। सोवियत संघ यूरोप में यथास्थिति स्वीकार करने के लिए तैयार था, परन्तु अन्यत्र नहीं। संयुक्त राज्य अमेरिका को तनाव शैथिल्य से बहुत अधिक आशाएँ थीं। हिन्द-चीन, हार्न ऑफ अफ्रीका तथा अफ़ग़ानिस्तान की घटनाओं ने अमेरिका को हताश किया, परन्तु उसे इन्हीं घटनाओं को सोवियत संघ के विरुद्ध प्रचार के अस्त्र के रूप में प्रयोग करने का अवसर भी मिला। इस बार यूरोप के बाहर के संघर्षों की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण हो गई। संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ दोनों ही अपने 'विरोधी के पिछले आँगन' (Backyard) में अपनी नीतियों को सक्रिय रूप से लागू करना चाहते थे। सोवियत संघ की सहायता से क्यूबा ने एक बार फिर लैटिन अमेरिका में क्रांतिकारी आंदोलनों का सक्रिय समर्थन करना आरंभ कर दिया। अमेरिका भी बदला लेने में पीछे नहीं रहा।

जिस समय तनाव शैथिल्य पूरे जोर पर था तब भी *प्रावदा* (Pravda) नामक सोवियत समाचार पत्र ने लिखा था कि, "सोवियत संघ साम्राज्यवाद की शक्तियों के किसी भी आक्रामक प्रयास को दुत्कार देगा, तथा अंगोला, मोज़ाम्बीक, ज़िम्बाबवे तथा दक्षिण अफ्रीका... के देशभक्तों की भरसक सहायता करेगा।" सोवियत नेता ब्रेज़नेव ने कम्युनिस्ट पार्टी की 27वीं काँग्रेस में 1976 में कहा था कि, "तनाव शैथिल्य वर्ग संघर्ष के नियमों में नाममात्र का भी परिवर्तन नहीं कर सकता था, और न उन्हें बदल सकता था। हम इस तथ्य को बिल्कुल छिपाना नहीं चाहते कि हम तनाव शैथिल्य को उस मार्ग के रूप में देखते हैं जो कि शांतिपूर्ण समाजवादी और साम्यवादी संरचना के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न करेगा।"

सोवियत संघ शस्त्रास्त्रों के निर्यात के क्षेत्र में अधिक सक्रिय हो गया। सामान्यतया शस्त्र निर्यात के संबंध में अमेरिका सोवियत संघ से बहुत आगे था। इस प्रवृत्ति में परिवर्तन हुआ और देशों में शस्त्र-निर्यात को लेकर होड़ शुरु हो गई। अस्सी के दशक के आरंभ में विश्व के कुल अस्त्र निर्यात का 30 प्रतिशत निर्यात सोवियत संघ कर रहा था। उधर अमेरिका का हिस्सा 30 प्रतिशत से कुछ कम था। सन् 1977 में हॉर्न ऑफ अफ्रीका क्षेत्र में इथयोपिया में नीति परिवर्तन हुआ और उसने सोवियत-समर्थन नीति अपनाई, जब कि सोमालिया का झुकाव अमेरिका की ओर बढ़ रहा था। सोवियत संघ ने इथयोपिया, सोमालिया, इरीट्रिया तथा जिबूती के एक समाजवादी संघ की जो योजना बनाई थी, वह सफल नहीं हुई। अंग्रेजों के 1967 में यमन से चले जाने के पश्चात् दक्षिणी यमन में सोवियत प्रभाव में वृद्धि हुई थी। फरवरी 1979 में उत्तरी यमन पर दक्षिणी यमन (South Yemen) ने आक्रमण कर दिया। सोवियत संघ ने उत्तरी यमन के साथ भी सामान्य संबंध बनाए रखने का प्रयास किया, यद्यपि वह दक्षिणी यमन को बड़ी मात्रा में युद्ध सामग्री की आपूर्ति कर रहा था। अमेरिका ने उत्तरी यमन को सहायता और विशेषज्ञ भेजने का प्रस्ताव किया। संयुक्त राज्य अमेरिका और सऊदी अरब, दोनों ने सोवियत संघ की भूमिका के लिए उसकी निंदा की। कई वामपंथी समर्थक अरब देशों ने भी उत्तरी यमन पर किए गए आक्रमण की आलोचना की। यद्यपि युद्ध-विराम लागू करवा दिया गया, फिर भी 1982 तक यमन में छापामार (Guerilla) गतिविधियाँ जारी रहीं।

हिन्द-चीन में सोवियत संघ ने वियतनाम का साथ दिया जबकि चीन के साथ वियतनाम के सम्बंध बिगड़ गए थे। कंबोडिया में चीन पोल पॉट (Pol Pot) सरकार का समर्थन कर रहा था। पोल पॉट शायद सर्वाधिक आततायी शासक था। विश्व युद्ध के पश्चात् इतना अत्याचारी शासन और कहीं नहीं पाया गया। पोल पॉट पर आरोप था कि उसने आतंकित करने के लिए लगभग बीस लाख निर्दोष लोगों की हत्या करवा दी थी। जनवरी 1979 में, सोवियत समर्थन से वियतनाम ने कंबोडिया पर हमला करके पोल पॉट को सत्ता से हटा दिया। चाहे पोल पॉट का शासन आतंकवादी था, फिर भी वियतनाम की कार्यवाही एक पड़ोसी की संप्रभुता पर तो आघात था ही। पश्चिमी आलोचकों ने इस कार्यवाही को कंबोडिया पर सोवियत समर्थन से वियतनाम द्वारा आक्रमण कहा। वियतनाम को 'पाठ पढ़ाने' के लिए फरवरी 1979 में चीनी सैनिकों ने वियतनाम पर आक्रमण कर दिया। सोवियत संघ ने उन्हें अपना आक्रमण तुरन्त बंद करने की चेतावनी दी। यह युद्ध चीन के पक्ष में नहीं जा रहा था। इसलिए कुछ समय बाद उसने सेना को वियतनाम से वापस बुला लिया। यह स्पष्ट हो गया कि चीन, सोवियत संघ और पश्चिमी देशों के मध्य तीव्र तनाव उत्पन्न हो गया था। गुट-निरपेक्ष देशों ने भी चीनी कार्यवाही की घोर आलोचना की।

Scanned with CamScanner

दिसम्बर 1979 के अंत में सोवियत सेना ने बड़े पैमाने पर अफ़ग़ानिस्तान में घुसकर हस्तक्षेप किया, तथा उसकी समस्त राजनीतिक व्यवस्था पर अपना अधिकार कर लिया। इसकी अमेरिका और चीन दोनों ने घोर निन्दा की, और नव-शीत युद्ध ने गंभीर रूप धारण कर लिया। लगभग 90,000 सोवियत सैनिकों ने 9 वर्ष तक अफ़ग़ानिस्तान को अपने अधिकार में रखा। उधर अमेरिका की प्रेरणा पर पाकिस्तान सोवियत-विरोधी अफ़गान तत्त्वों को छापामारी का प्रशिक्षण देता रहा था। अनेक अफ़ग़ान भाग कर ईरान भी चले गए थे। हस्तक्षेप के दौरान हीं नही, बाद में भी सामान्य स्थिति बहाल नहीं हो पाई।

1988 के जिनेवा समझौते के अनुसार सोवियत नेता गौर्बाचोव ने अफ़ग़ानिस्तान से अपनी सेना वापस बुला लेने का निर्णय किया। उन्होंने हस्तक्षेप बनाए रखने को निरर्थक समझा। सोवियत सेनाएँ 1989 के मध्य तक वापस चली गईं। तीन वर्ष पूर्व सोवियत-समर्थित राष्ट्रपति नज़ीबुल्ला ने बाबरक करमाल से सत्ता प्राप्त कर ली थी। जिनेवा समझौते में अफ़ग़ान संकट को समाप्त करने वाले सभी पक्षों ने भाग लिया था। अब डा. नजीबुल्ला ने यह स्वीकार कर लिया कि वह सत्ता त्याग कर शासन का उत्तरदायित्व अफ़ग़ान जनता को सौंप देंगे।

नव शीत युद्ध की झलक साल्ट वार्ता में भी दिखाई दी थी। यह रणनीतिक अस्त्रों के परिसीमन सम्बंधी (SALT) वार्ता थी। सोवियत संघ और अमेरिका दोनों ही न्यूट्रॉन बम बनाने की होड़ में लग गए थे। हिन्द महासागर में भी उनकी प्रतिस्पर्द्धा जारी थी। इस बीच 1985में सोवियत संघ का नेतृत्त्व ग्रहण करने के पश्चात् न केवल देश को लोकतंत्र व्यवस्था देने के प्रयास आरंभ किए थे, बल्कि शीत युद्ध को समाप्त करने के लिए भी प्रयत्न करने आरंभ किए थे। राष्ट्रपति रीगन और गौर्बाचोव के प्रयासों से नव शीत युद्ध, 1988 से, एक बार फिर तेज़ी से तनाव शैथिल्य में परिवर्तित होने लगा था।

नव-शीत युद्ध के दौरान संसार में तीन शक्ति गुट प्रतिस्पर्द्धा कर रहे थे। वे थेः अमरीकी गुट, सोवियत गुट तथा चीनी गुट। पाकिस्तान ने स्वयं को गुट-निरपेक्ष घोषित करके, 1979 से गुट-निरपेक्ष आंदोलन की सदस्यता तो प्राप्त कर ली थी, परन्तु वह व्यवहार में चीन और अमेरिका दोनों के साथ संलग्न था। भारत पहले से ही सोवियत संघ का निकटवर्ती मित्र था। नव शीत युद्ध, संघर्ष क्षेत्र के संदर्भ में, मूल शीत युद्ध से भिन्न था। मूल शीत युद्ध का मुख्य "रणक्षेत्र" यूरोप था, जबकि नव-शीत युद्ध यूरोप के बाहर "लड़ा गया"। यह या तो अफ़ग़ानिस्तान में केन्द्रित था, या अरब इज़रायल संघर्ष में, या हॉर्न ऑफ अफ्रीका के क्षेत्र में, या फिर हिन्द-चीन के संघर्ष में। इस प्रकार नव-शीत युद्ध विश्व व्यापी था। इस दौरान विवाद, या संभावित संघर्ष का एक अन्य क्षेत्र हिंद महासागर भी था। महाशक्तियों की प्रतिस्पर्द्धा हिन्द महासागर की क्षेत्रीय शांति के लिए बड़ा खतरा थी। मूल शीत युद्ध की भांति, नव-शीत युद्ध में भी संयुक्त राष्ट्र इसका एक मंच रहा।

9.4 शीत युद्ध की समाप्ति

शीत युद्ध उस समय आरंभ हुआ था जब मित्र राष्ट्रों ने जर्मनी तथा अन्य धुरी राज्यों को 1945 में पराजित किया। संसार यह अपेक्षा कर रहा था कि मित्र राष्ट्रों में स्थायी मैत्री बनी रहेगी जो कि विश्व शांति में सहायक होगी, किन्तु उनमें मतभेद उत्पन्न हो गए और विजयी राष्ट्र दो ऐसे गुटों में विभाजित हो गए जिनमें शत्रुता के स्पष्ट संकेत मिले। इस प्रकार आरंभ हुआ शीत युद्ध लगभग 45 वर्ष तक चलता रहा और यह विश्व के लिए यह एक सामान्य स्थिति बन गई थी। जब यह अचानक दिसंबर 1989 में समाप्त हो गया, उससे पूर्व जनसाधारण यह सोचने लगा था कि पूर्व-पश्चिम संघर्ष कभी समाप्त होगा ही नहीं। जब शीत युद्ध समाप्त हुआ तब पश्चिमी गुट को 'विजय' की कोई आशा नहीं थी, और पूर्वी गुट उस समय तक यह स्वप्न देख रहा था कि पूँजीवाद स्वयं का विनाश कर लेगा। शीत युद्ध के अंत का श्रेय दो ऐसे नेताओं को मिला जिनके एक-दूसरे के साथ सहयोग करने की कोई संभावना नहीं थी। वे थे अमरीकी राष्ट्रपति रोनल्ड रीगन तथा सोवियत नेता मिखाइल गौर्बाचोव। वे परस्पर विरोधी प्रतीत होते थे। राष्ट्रपति रीगन का निर्वाचन परम्परागत अमरीकी मूल्यों की रक्षा करने के लिए हुआ था। उनसे यह अपेक्षा थी कि वह साम्यवाद के प्रसार को रोकने (containment of communism) का कार्य करेंगे, उसे पराजित करने (to defeat communism) का नहीं। वह अमरीकी समाज के दक्षिणपंथियों का प्रतिनिधित्व करते थे। उधर गौर्बाचोव का यह प्रयास था कि वह सोवियत विचारधारा की श्रेष्ठता को बल देकर

Scanned with CamScanner

और भी सुदृढ़ करेंगे। रीगन तथा गौर्बाचोव दोनों को अनुमान था कि अंत में विजय उन्हीं की विचारधारा की होगी। भूतपूर्व अमरीकी विदेश मंत्री हेनरी कीसिंगर ने दोनों नेताओं की तुलना करते हुए लिखा कि, जहाँ रीगन को अपने समाज की आकांक्षाओं का पूर्ण ज्ञान था, वहाँ गौर्बाचोव का अपने समाज से संपर्क ही टूट गया था; परन्तु परेशानी तब आरंभ हुई जब गौर्बाचोव का सोवियत संघ में स्वतंत्र और लोकतांत्रिक समाज की स्थापना का स्वप्न साकार नहीं हो सका। उसने उन सुधारों का प्रयास किया जिनकी सामर्थ्य सोवियत समाज में नहीं थी। इसके कारण संकट इतना बढ़ गया कि उस व्यवस्था का ही अंत हो गया जिसकी वरीयता सिद्ध करने का प्रयास गौर्बाचोव कर रहा था।

The end

9.4.1 रीगन और गौर्बाचोव

जिस समय (1981 में) रीगन ने राष्ट्रपति का पद ग्रहण किया तब अमेरिका की प्रतिष्ठा का तेजी से ह्रास हो रहा था। अमेरिका वियतनाम में विफल हो रहा था, तथा अंगोला से वह भाग खड़ा हुआ था। उधर, सोवियत संघ क्यूबा की सेना को अंगोला से लेकर इथयोपिया (अबीसीनिया) तक फैला चुका था। उनके साथ हजारों सोवियत लड़ाकू परामर्शदाता भी थे। अफ़ग़ानिस्तान पर 90,000 सोवियत सैनिकों का अधिकार था। पश्चिम-समर्थक ईरान के शाह को सत्ता से उखाड़ फेंका गया था। उसके स्थान पर एक विप्लवकारी अमेरिका-विरोधी इस्लामी शासन सत्तारूढ़ हुआ था। उसके समर्थक कट्टरपंथी युवकों ने एक वर्ष से भी अधिक समय (1979-80) तक, 52 अमरीकी राजनयिकों और कर्मियों को तेहरान में अमरीकी दूतावास में बंधक बनाकर रखा। उस समय अमेरिका शक्तिहीन प्रतीत हो रहा था। जनमत सरकार विरोधी हो गया था और 1980 के राष्ट्रपति चुनाव में कार्टर पुनः निर्वाचित होने में असफल रहे। अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति साम्यवाद के पक्ष में थी। लग रहा था कि साम्यवाद अपने समक्ष किसी को टिकने नहीं देगा, और उस परिवेश में ऐसा

Scanned with CamScanner

9.6 शीत युद्ध की शांतिपूर्ण समाप्ति

लगभग 45 वर्ष तक संसार को शीत युद्ध की राजनीति की आदत पड़ गई थी। अतः, जब शीत युद्ध की अचानक समाप्ति हो गई तब जनसाधारण को विश्वास ही नहीं हो रहा था कि अब विश्व वह नहीं रहा था जो पिछले 45 वर्ष में था। शीत युद्ध का अंत और पूर्वी यूरोप में साम्यवाद का विखंडन लगभग एक ही समय हुए। लगभग उन्हीं दिनों में बर्लिन की दीवार को गिरा दिया गया, जर्मनी का पुनएर्कीकरण हुआ, तथा पूर्व समाजवादी देशों में जनता द्वारा निर्वाचित लोकतान्त्रिक सरकारों की स्थापना हुई। गौर्बाचोव तथा अमरीकी राष्ट्रपति ने सफलतापूर्वक मध्यम दूरी तक मार करने वाले प्रक्षेपास्त्रों की परिसीमन संधि (INF Treaty) पर हस्ताक्षर किए, तथा शीत युद्ध

Scanned with CamScanner

को समाप्त कर दिया। गौर्बाचोव ने सोवियत संघ में अनेक आर्थिक और राजनीतिक सुधार लागू किए, परन्तु उनको सफलतापूर्वक वह अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँचा सका। एक पूर्व साम्यवादी नेता, बोरिस येल्तसीन (Boris Yeltsin) रूसी गणराज्य के राष्ट्रपति निर्वाचित हुए, और उसके साथ ही सोवियत राष्ट्रपति की शक्ति का ह्रास होने लगा। सोवियत संघ के अनेक गणराज्यों (प्रान्तों) ने देश से पृथक होकर स्वतंत्रता की माँग करना आरंभ किया, तथा जन-प्रतिनिधि कांग्रेस ने सोवियत संघ के लिए बहुदलीय लोकतंत्र की माँग स्वीकार कर ली। उधर कट्टरपंथी (अनुदार) सोवियत साम्यवादियों ने अगस्त 1991 में एक षड्यन्त्र रचकर गौर्बाचोव को "अपदस्थ किया"। परन्तु स्वयं अपनी सत्ता के छिन जाने से आशंकित येल्तसीन ने खुलकर गौर्बाचोव को समर्थन किया, तथा अल्पकालीन साम्यवादी षड्यंत्र को विफल कर दिया। गौर्बाचोव को मुक्त तो करवा लिया, परन्तु वह देश को संगठित नहीं रख सका। सोवियत संघ दिसम्बर 1991 में विखंडित होकर 15 स्वतंत्र देशों में विभाजित हो गया। इस प्रकार शीत युद्ध की समाप्ति ने न केवल पूर्वी यूरोप में साम्यवादी शासनों का अंत किया, परन्तु एक समय महाशक्ति रहे सोवियत संघ का भी "निधन" हो गया।

अगस्त 1991 की, गौर्बाचोव-विरोधी असफल क्रान्ति ने मास्कों में साम्यवादी शासन के अंत पर मोहरें लगा दी। साम्यवाद के अंत के पश्चात् शीत युद्धोत्तर विषय में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। कैग्ले एवं विट्कॉफ (Keyley Jr. and Wittkopf) का कहना है कि:

शीत युद्ध की अचानक समाप्ति ने दो विश्व युद्धों के इन परिणामों से कि महाशक्तियों की प्रतिस्पर्द्धा का अंत सदा सशस्त्र संघर्ष में होता है, भिन्न पाठ पढ़ाया। शीत युद्ध अलग प्रकार था; इसका अंत शांतिपूर्ण हुआ। यह स्पष्ट करता है कि बड़ी शक्तियाँ अपने संघर्षों को बिना रक्तपात के सुलझाने में सक्षम होती हैं, तथा यह कभी-कभी संभव होता है कि वे स्वयं अपनी प्रतिस्पर्द्धा का प्रबंधन करके अपने विवादों का समाधान कर लें।

1994 में लिखे एक लेख में रॉबर्ट डी. श्लेज़िंगर ने शीत युद्ध के अंत के विषय में लिखा था, "अब जबकि शीत युद्ध समाप्त हो गया है, ऐतिहासिक पोस्टमार्टम अभी आरंभ हुआ है। अमरीकी सरकार के संग्रहालयों से दस्तावेज़ों का महासागर प्राप्त किया गया है जिसे अतीत में बंद पड़े सोवियत और पूर्वी यूरोप के भंडारों से बहती नदियों ने और सामर्थ्य प्रदान की है।" गैड्डी (Gaddie) के अनुसार, जो लोग अमरीकी विदेश नीति के क्रियान्वयन की प्रशंसा करते हैं, उनका ऐसा विश्वास है कि सोवियत संघ के विघटन से अमरीकी अधिकारियों की गतिविधियों को मान्यता प्राप्त हुई, तथा शीत युद्ध पर हुए व्यय की सार्थकता सिद्ध होती है। परन्तु, अमरीकी राजनय के आलोचकों ने दावा किया, कि यदि अमेरिका ने अधिक रचनात्मक और कम प्रतिद्वंद्वी नीतियाँ अपनाई होतीं तो, कम कीमत पर, शीत युद्ध शीघ्र समाप्त हो गया होता।

पाश्चात्य देशों में अनेक लोग इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि अमरीकी गुट ने शीत युद्ध में विजय प्राप्त की थी। मैथ्यू ईवांजेलिस्ता की निम्नलिखित टिप्पणी से उनका तर्क प्रतिबिम्बित होता है। उसने अपनी पुस्तक "*Unarmed Forces: The Transnational Movement to End the Cold War*" में लिखा था:

"अनुदार उपायों को जिन्हें 1980 के दशक से छानकर निकाला गया उसका एक महत्वपूर्ण उपादान यह था कि रोनल्ड रीगन की "कठोर नीति" सोवियत साम्राज्य के विखंडन तथा शीत युद्ध की विजय में एक महत्वपूर्ण तत्त्व था। 30 अरब डालर के घाटे के सैनिक व्यय के बजट के चलते तथा 'स्टार वार्स' के भय के द्वारा एक ऐसी चतुर रणनीति अपनाई गई जिसने सोवियत संघ के सैनिक प्रतिद्वंद्विता के प्रयासों का दिवाला निकाल दिया।"

शीत युद्ध की समाप्ति की समीक्षा करते हुए, जोशुआ गोल्डस्टीन इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि निश्चय के साथ यह कहना अत्यंत कठिन था कि शीत युद्ध की समाप्ति क्यों हुई। उसने लिखा था कि, "विद्वान इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर सहमत नहीं हैं कि शीत युद्ध क्यों समाप्त हुआ।" एक तर्क यह है कि राष्ट्रपति रीगन के नेतृत्व में "अमेरिका की सैनिक शक्ति ने सोवियत संघ को उस समय दिवालिया बना दिया जब वह अस्त्रों की होड़ में व्यस्त था।" गोल्डस्टीन के अनुसार, दूसरा तर्क यह है कि कई दशकों तक सोवियत संघ आंतरिक रूप से प्रगतिहीन हो गया था, और अंततः अपनी सरकारी व्यवस्था की कमज़ोरी के कारण, जिसका विदेशी दबाव से कुछ लेना देना नहीं था, वह विखंडित हो गया। परन्तु, यह तथा अन्य अनेक पाश्चात्य विद्वानों द्वारा तर्क केवल इस बात पर प्रकाश डालने का प्रयास करते हैं कि सोवियत संघ भंग क्यों हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के

Scanned with CamScanner

विद्यार्थियों को इस बात से प्रसन्न होना चाहिए कि 45 वर्ष पुराना पूर्व-पश्चिम संघर्ष समाप्त हो गया, और वह भी शांतिपूर्वक।

शीत युद्ध का अंत शांतिपूर्ण रूप से बिना बड़े विनाश के हो गया। यह कैसे हुआ? शीत युद्ध के शांतिपूर्ण अंत की अनेक व्याख्याएँ की गई हैं। एक विचार तो यह है कि अमरीकी राजनयिक जॉर्ज कैनन द्वारा अपने "X" हस्ताक्षरित लेख में साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिए जो सुझाव दिए थे, वह सत्य भविष्यवाणी सिद्ध हुए। कैनन ने यह अनुमान लगाया था कि ग़ैर-सैनिक तौर पर प्रसार रोकने (containment) से "ऐसी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिलेगा जिनका परिणाम या तो विखंडन में होगा, या फिर सोवियत शक्ति के धीरे-धीरे कम हो जाने में।" अनेक पर्यवेक्षकों का मानना है कि हुआ भी ऐसा ही, चाहे इसमें चालीस वर्ष से अधिक लग गए।

नव-यथार्थवादियों ने एक अन्य विचार व्यक्त किया। उन्होंने परमाणु अस्त्रों के योगदान, सैनिक शक्ति के महत्व, कठोर द्विध्रुविता, तथा संधियों के द्वारा दीर्घकालीन अवरोधकता पर बल दिया। सन् 1991 में पूर्व अमरीकी राष्ट्रपति रीगन के एक परामर्शदाता रिचर्ड पाईप्स ने नव-यथार्थवादी विचार व्यक्त किए, और कहा कि, "जिन्होंने परमाणु अवरोधक के तथा गंभीर सैनिक क्षमता के पक्ष में तर्क दिए उन्होंने उस शक्ति पर बल दिया जिसने सोवियत नेताओं को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के कम गंभीर और कम भयंकर उपागम अपनाने के लिए विवश किया।"

शीत युद्ध के शांतिपूर्ण अंत के लिए उदारवादियों तथा नव-उदारवादियों ने अन्य कारण भी बताए। उदाहरण के लिए, कार्पेन्टर (Ted Galen Carpenter) ने 1991 में ही यह कहा 2 था कि, "अनेक प्रदर्शनकारियों ने .... जिन्होंने साम्यवादी शासन को अस्वीकार करने की चेष्टा की, उन्होंने अमरीकी व्यवस्था की ओर प्रेरणा के लिए देखा। परन्तु, उस प्रेरणा का स्रोत अमेरिका की यह ख्याति थी कि वह सीमित सरकार का स्वर्ग था, न कि वांशिगटन का 300 अरब डालर प्रतिवर्ष का सैनिक बजट और उसका विश्वव्यापी सैनिक अड्डों का जाल। परन्तु, सोवियत संघ के अमेरिका एवं कनाडा के अध्ययन के संस्थान के निर्देशक गोर्गी आर्बेटर ने भिन्न विचार व्यक्त किया। उसने कहा कि यथार्थवादी सिद्धान्त कि "राष्ट्रपति रीगन की कठोर नीति तथा बढ़ती अस्त्र-होड़ .... के कारण साम्यवादियों ने त्याग कर दिया" मात्र एक बकवास थी। इसके विपरीत, इस नीति के कारण सुधारकों का जीवन संकट में पड़ गया। जो लोकतान्त्रिक सुधार चाहते थे उनका जीवन और भी दूभर कर दिया। अनुदारवादियों तथा प्रतिक्रियावादियों के पास अन्य को प्रभावित करने की अबाध शक्ति थी .... ब्रेज़नेव की मृत्यु के पश्चात्, रीगन ने सुधार असंभव कर दिए .... तथा गौर्बाचोव के लिए सैनिक व्यय में कटौती कर पाना कठिन कर दिया।"

यथार्थवादियों, नव-यथार्थवादियों, उदारवादियों एवं नव-उदारवादियों के सिद्धान्तों के संदर्भ में इस बात की व्याख्या करना कि, शीत युद्ध शांतिपूर्वक क्यों समाप्त हुआ, संभव नहीं है। जिस प्रकार दशकों तक विद्वान इस बात पर विवाद करते रहे कि शीत युद्ध के आंरभ के कारण क्या थे, उसी प्रकार इसकी शांतिपूर्वक समाप्ति की समीक्षा कर पाना भी अत्यंत कठिन कार्य होगा। संसार को परमाणु विध्वंस से बचा लिया गया; तथा गुटों की राजनीति का स्थान सहयोग न ले लिया। महाशक्तियों के दो चोटी के नेताओं ने साहस और बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन किया, और यह निर्णय किया कि मध्यम दूरी तक मार करने वाले परमाणु अस्त्रों में कटौती की जाएगी। साथ ही उन्होंने रणनीतिक अस्त्रों में कटौती की वार्ता आरंभ करके भी साहस का प्रदर्शन किया। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ दोनों को शीत युद्ध की निरर्थकता का बोध हुआ, इस बात का श्रेय उन्हें दिया जाना चाहिए। राष्ट्रों के मध्य पूर्ण सहयोग तो कभी संभव हो नहीं सकता है, पूर्ण संघर्ष भी वांछनीय नहीं था। शीत युद्ध की शांतिपूर्ण समाप्ति के पीछे प्रमुख विचार यह था कि दृष्टिकोणों और विचारों में अंतर होते हुए भी सब देशों में शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व हो सके। शीत युद्ध के शांतिपूर्वक समापन को किसी विचारधारा या सिद्धान्त का दास नहीं बनाया जा सकता है।

शीत युद्ध के अंत ने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंधों की प्रकृति में ही परिवर्तन कर दिया। अन्तर्राष्ट्रीय शांति की नई आशा जागृत हुई, परन्तु साथ ही नए प्रकार की विश्वव्यापी अस्थिरता की संभावना भी उत्पन्न हो गई। जैसा कि तत्कालीन अमरीकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश (सीनियर) ने 1991 में कहा था, साम्यवाद के विखंडन ने पुरानी जातीय

Scanned with CamScanner

घृणा, तनाव एवं बदले की भावनाओं को पुनर्जीवित कर दिया था। यह बात पूर्व यूगोस्लाविया के विभिन्न प्रदेशों, तथा रूस के कुछ क्षेत्रों में भड़की जातीय/धार्मिक हिंसा से व्यक्त होती है।

शीत युद्ध की समाप्ति के साथ ही, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ दोनों ही उस प्रतिस्पर्द्धा से मुक्त हो गए, जिसके फलस्वरूप संसाधनों के विशाल भंडारों की क्षति हुई थी, और उभरती अर्थव्यवस्थाओं जैसे कि चीन, जर्मनी और जापान की तुलना में महाशक्तियों की आर्थिक क्षमता का ह्रास हुआ था। इस अर्थ में, लेबो (Lebow) तथा स्टीन (Stein) के 1994 में व्यक्त विचारों के अनुसार, दोनों ही महाशक्तियों की पराजय हुई थी। दोनों की मानो साँस रुक गई थी।

9.6.1 भविष्य के लिए संकेत

शीत युद्ध के पश्चात् घटी घटनाएँ इस इकाई का भाग नहीं हो सकती हैं। फिर भी, संभावित भविष्य के विषय में कुछ संकेत अवश्य मिल सकते हैं। कैग्ले एवं विट्कॉफ़ के अनुसार, श्शीत युद्ध के शांतिपूर्ण अंत का अर्थ यह कदापि नहीं है कि शांतिपूर्ण भविष्य भी सुनिश्चित हो गया। इसके विपरीत ... इतिहास और यथार्थवादी सिद्धान्तों का निराशाजनक संकेत यह है कि आर्थिक शक्ति के विखंडित होने की वर्तमान प्रवृत्ति नई प्रतिस्पर्द्धा, संघर्ष, और शायद महाशक्तियों के मध्य युद्ध तथा नई समस्याओं एवं संभावित ख़तरों में कई गुणा वृद्धि को जन्म देगी।श् यह भविष्यवाणी निसंदेह अत्यंत निराशाजनक है। फिर भी निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता है क्योंकि परिवेश में कभी भी परिवर्तन हो सकते हैं। बीसवीं शताब्दी के आरंभ में न केवल जर्मनी एवं जापान आर्थिक महाशक्तियों के रूप में उभर रहे थे, बल्कि दक्षिणी कोरिया जैसे छोटे देश भी विशाल आर्थिक शक्ति के रूप में उभरने का आक्रामक प्रयास कर रहे थे।

इस सबके अतिरिक्त भारत और पाकिस्तान दोनों परमाणु अस्त्र-सम्पन्न देश हो गए थे, तथा पाकिस्तान द्वारा जानबूझकर या अनजाने में परमाणु बम के उपयोग का ख़तरा भारत पर मंडरा रहा था। अर्थव्यवस्था के उदारीकरण तथा सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत की बढ़ती शक्ति, इस बात का निश्चित संकेत थी कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में भारत एक अत्यंत महत्वपूर्ण शक्ति बनने की ओर अग्रसर है। अतः, शीत युद्धोत्तर स्थिति को 50 वर्ष तक शांति की गारंटी हरगिज़ नहीं कहा जा सका। अंत में, हम कैग्ले एवं विट्कॉफ के विचारों से सहमत हैं। उनका तर्क है कि, "आने वाले समय में, रूस पुनः एक महाशक्ति के रूप में उभर सकता है, यदि वह अपनी .... घरेलू समस्याओं का समाधान कर सके तब। यूरेशिया के मध्य में स्थित, यूरोप एवं प्रशान्त रिम के बीच का सेतु, जिसके दक्षिण में चीन और भारत स्थित हैं, वह रूस सैनिक रूप से विशाल बन सकता है।"

9.7 सारांश

दिसम्बर 1989 में समाप्त हुए शीत युद्ध का अंत भली भांति समझने के लिए यह आवश्यक है कि इसकी थोड़ी जानकारी हो कि शीत युद्ध था क्या? यह क्यों और किस प्रकार प्रारंभ हुआ? अतः, इस इकाई में आपने शीत युद्ध के अर्थ और उसकी उत्पत्ति के विषय में पढ़ा। यह एक "राजनयिक युद्ध" था। यह रणक्षेत्र में नहीं, लोगों के मस्तिष्कों में लड़ा गया। शीत युद्ध में सशस्त्र सेनाओं ने भाग नहीं लिया। केवल राजनयिक कार्यों के द्वारा पूर्व और पश्चिम के मध्य तनाव को उच्च स्तर पर बनाए रखा गया। द्वितीय विश्व युद्ध के तुरंत बाद युद्धकालीन मित्रों में शत्रुता हो गई थी। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ (जो महाशक्तियों के रूप में उभरे) के नेतृत्त्व में दो शक्ति गुटों का निर्माण हुआ। दोनों गुटों ने शीत युद्ध के लिए एक दूसरे को दोषी ठहराया। यह निश्चित रूप से कोई नहीं कह सकता कि शीत युद्ध कब आरंभ हुआ।

शीत युद्ध के दौरान अनेक अवसरों पर तनाव ने तीव्र रूप धारण किया, जबकि ऐसे अवसर भी आए जब वातावरण में शांति और सहयोग के लक्षण पाए गए। तनाव में कमी की स्थिति को 'तनाव शैथिल्य' का नाम दिया गया। क्यूबा संकट जो अत्यंत गंभीर था, उसके पश्चात् तनाव शैथिल्य (détente) के लिए प्रयास तेज़ किए गए। इन्हीं दिनों आंशिक परमाणु परीक्षण निषेध संधि तथा परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर किए गए। हेलिंसकी सम्मेलन में हुए समझौते (1975) ने शीत युद्ध के अंत की आशा जागृत कर दी थी, परन्तु 1979 में यह युद्ध फिर से

Scanned with CamScanner

भड़क उठा विशेषकर तब जबकि सोवियत सेनाओं ने अफ़ग़ानिस्तान में हस्तक्षेप करके उस देश पर क़ब्ज़ा कर लिया।

शीत युद्ध को समाप्त करने की आशा तब पुनः बलवती जब एक ओर अमरीकी राष्ट्रपति फ़ोर्ड, रीगन तथा अंततः बुश ने, तथा दूसरी ओर सोवियत नेता ब्रेज़नेव एवं फिर गौर्बाचोव ने इसके लिए प्रयास तेज़ किए। शीत युद्ध के अंत के लिए अनेक कारण उत्तरदायी थे। सोवियत संघ में आंतरिक सुधारों के लिए गौर्बाचोव के प्रयास, तथा दोनों पक्षों द्वारा परमाणु अस्त्रों में कटौती का समझौता (INF Treaty), तथा परमाणु प्रसार रोकने के प्रयत्न कुछ ऐसे कारण थे जिन्होंने शीत युद्ध की समाप्ति में योगदान किया। पूर्वी यूरोप के देशों में साम्यवादी सरकारों के गिरने तथा अनेक सोवियत गणराज्यों द्वारा स्वतंत्रता की माँग किए जाने से शीत युद्ध की समाप्ति को गति प्राप्त हुई। बर्लिन की दीवार, जिसमें नगर के पूर्वी और पश्चिमी भागों को विभाजित किया हुआ था, उसको 1989 में नगर की उत्साहित जनता ने गिरा दिया, तथा 1990 में जर्मनी के दोनों राज्यों का पुनएकीकरण हो गया। इसके साथ ही समाजवादी विचारधारा भी लगभग समाप्त हो गई। इन परिस्थितियों में दोनों महाशक्तियों का एक दूसरे के निकट आना स्वाभाविक था।

जब सोवियत राष्ट्रपति गौर्बाचोव ने देश में बहुदलीय लोकतन्त्र की माँग स्वीकार कर ली, तब उसके साथ ही उसकी सत्ता को धक्का लगा। सोवियत राष्ट्रपति की शक्ति को तब और भी धक्का लगा जब, रूसी गणराज्य की जनता ने प्रत्यक्ष चुनाव में बोरिस येल्तसीन को राष्ट्रपति निर्वाचित घोषित किया। इसके साथ ही गौर्बाचोव की कठिनाइयों में तब और गंभीर वृद्धि हुई जब राष्ट्रपति के विरुद्ध कट्टरपंथी साम्यवादियों ने असफल क्रांति का प्रयास, तथा अनेक गणराज्यों ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। परन्तु, उससे पूर्व ही, राष्ट्रपति बुश और गौर्बाचोव ने शीत युद्ध की समाप्ति की औपचारिक घोषणा कर दी थी।

शीत युद्ध के शांतिपूर्ण समापन के विषय पर अनेक विद्वानों ने अलग-अलग विचार व्यक्त किए, तथा उसका सैद्धान्तीकरण करने की चेष्टा की। उनमें से अधिकांश - यथार्थवादियों, नव-यथार्थवादियों, तथा नव-उदारवादियों - ने अपने-अपने तर्क प्रस्तुत किए कि, बिना सशस्त्र संघर्ष के, शीत युद्ध शांतिपूर्वक कैसे समाप्त हो गया। शीत युद्ध के अंत हो जाने के साथ इस विषय में शंका उत्पन्न हुई कि क्या शांति स्थायी रहेगी, तथा क्या एक ऐसी नई विश्व-व्यवस्था स्थापित हो सकेगी, या ऐसा नया शक्ति-केन्द्र उदित होगा जो संयुक्त राज्य अमेरिका के वर्चस्व को चुनौती दे सकेगा।

Scanned with CamScanner